Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 5, April-2019, ISSN 2230-7540

आँचलिक उपन्यास की बहुआयामी अवधारणा

Dr. Abhishek Yadav*

सार – हिन्दी कथा साहित्य में सन् 1952-53 से 'आंचलिक' शब्द प्रयोग होने लगा और धीरे-धीरे इतना व्यापक तथा लोकप्रिय हुआ कि इसने एक साहित्यिक आंदोलन का रूप धारण कर लिया। यह शब्द मुख्यतया कथा साहित्य की ही एक समसामयिक धारा के लिए प्रयुक्त किया गया परन्तु इसका प्रभाव केवल वहीं तक सीमित नहीं रहा। कालान्तर में 'आंचलिक' शब्द अति-व्याप्ति क्षेत्र के कारण इसमें न केवल स्थानीय रंग से युक्त रचनाएं वरन् शुद्व ग्रामकथायें तक समेट ली गयी। परिणामतः कथा साहित्य में नगर जीवन से भिन्न रचनाएं आंचलिक श्रेणी में सम्मिलित की जाने लगी।

---------------------------------X---------------------------------

फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास 'मैला आंचल' की 'भूमिका' (1954) में सर्वप्रथम 'आंचलिक' शब्द का प्रयोग किया गया। हिन्दी में किसी क्षेत्र विशेष के अर्थ में प्रयुक्त होने वाला 'अंचल' शब्द मूलतः संस्कृत शब्द 'अंचल' है, जो 'मणिनाथ व्याकरण' के अनुसार 'अंच' धातु में 'अलंज' प्रत्यय लगाने से निर्मित हुआ है। "हिन्दी राष्ट्रभाषा कोष' के अनुसार 'अंचल' शब्द से तात्पर्य - आंचल, पल्ला, साड़ी का छोर, देश का वह भाग या प्रान्त जो सीमा के पास हो, नदी के किनारे की भूमि, तट का किनारा क्षेत्र आदि है। इस प्रकार 'अंचल' से तात्पर्य है कि किसी क्षेत्र का कोई ऐसा विशेष भाग जिसकी अपनी एक संस्कृति हो, अपनी एक भाषा हो, अपनी समस्याएं हो तथा जिसमें वहां के स्थानीय रंग, त्यौहार, आदि अन्य क्षेत्रों से भिन्न हों।

डॉ. रामदरश मिश्र के अनुसार, "आंचलिक उपन्यास मानो हृदय में किसी प्रदेश की कसमसाती हुई जीवनानुभूति को वाणी देने का अनिवार्य प्रयास है. आंचलिक उपन्यास अंचल के समग्र जीवन का उपन्यास है। इसी प्रकार 'मारिया एडवर्थ' ने भी आंचलिक उपन्यास को परिभाषित करते हुए कहा है कि, "जिस उपन्यास में पात्रों का समग्र जीवन उस अंचल से प्रभावित होता है तथा जिसमें अंचल अपनी परम्पराओं के कारण अन्य अंचलों से भिन्न प्रतीत होता है, वह आंचलिक उपन्यास है।

कुछ समीक्षक हिन्दी में आंचलिक उपन्यास का आरम्भ 1930 ई. के आसपास से स्वीकार करते हैं। इनमें प्रमुख है-'भुवनेश्वर मिश्र' का 'घराऊ घटना' (1983) और बलवंत-भूमिहार' (1901), हरिऔध का 'अधखिला फूल' (1907), गोपालराम गहमरी का 'भोजपुर की ठगी' (1912), आदि। भारत की स्वतंत्रतापूर्व उपर्युक्त उपन्यासों को अनेक समीक्षकों ने आंचलिक श्रेणी में सम्मिलित किया है। इसी प्रकार स्वतंत्रता के पश्चात् जो प्रमुख आंचलिक उपन्यास रचित हुए उनमें प्रमुख हैं- नागार्जुन की 'रतिनाथ की चाची' (1948) जिसमें मिथिला के जनजीवन की कथा को चित्रित किया है। यह नागार्जुन का पहला आंचलिक उपन्यास है। बलचनमा (1952) नागार्जुन का आंचलिक उपन्यास है इसमें एक गरीब किसान के पुत्र बलचनमा की करूण कथा का उल्लेख है। नागार्जुन के 'नई पौध' (1953) मिथिला के सौराठ मेले के माध्यम से 'अनमेल विवाह' को दर्शाया गया है। 'वरुण के बेटे' (1957) में मिथिला के मछुआरों के जीवन को चित्रित किया गया है। 'उग्रतारा' (1953) में जेल के जीवन को चित्रित किया गया है। इसके अलावा 'बाबा बटेसरनाथ', 'दुखमोचन' आदि आंचलिक उपन्यास नागार्जुन द्वारा सृजित किए गए हैं।

आँचलिक उपन्यास की अवधारणा के संबंध में विद्वानों में मतैक्य नहीं है। कुछ विद्वानों ने इसे रोमांटिक सुधारवाद कहा तो कुछ विद्वानों ने इसे "नॉस्टेल्जिया" से संबंधित इसी के साथ कुछ आलोचकों ने 'जाति विशेष के परम्परागत जीवन' से आँचलिकता को सम्बद्ध माना है। आँचलिकता को स्वातंत्रोत्तर भारतीय परिवेश में उभरने का अवसर मिला है। इसके पीछे सांस्कृतिक पुनर्जागरण की विश्वव्यापी मानसिकता सक्रिय मानी गयी है। डॉ. विवेकी राय के मत से- 'जिस तरह हार्डी में इग्लैण्ड का वेसेक्स का अंचल, पॉकनर में अमेरिका का दक्षिणी अंचल अपने समस्त रस-गंधों के साथ उभरता है। उसी प्रकार रेणु के 'मैला आँचल' में पूर्णियाँ अंचल 'गणेश नारायण दाण्डेकर' (मराठी) में 'बराड़ अंचल'

www.ignited.in

'सत्यनाथ भादुड़ी' में बंग अंचल, झबेर चंद्र भेघाड़ी (गुजराती) में सौराष्ट्र अंचल उजागर होते हैं।

आँचलिकता के पीछे कुछ विद्वान जनपदीय आन्दोलन (बनारसी दास चतुर्वेदी द्वारा चलाया गया), बंगाली साहित्य के 'कल्लोड़न अधिवेशन', 'प्रगतिशील लेखक संघ' की स्थापना आदि को आंतरिक कारण मानते हैं। यह प्रायः सर्वसम्मत है कि- आंचलिक उपन्यास में क्षेत्र विशेष का सत्य उद्घाटित होता है, यह क्षेत्र विशेष शहर का नहीं, आँचालिकता की दृष्टि से ग्रामीण जीवन से ही है।

'रघुवीर सहाय' ने आँचलिकता के दौर की तुलना रूसी साहित्य की "पोवेस्त्रा" विधा से की है और रेणु के 'मैला आँचल' की तुलना 'वेलेंतीन रस्पुतिन' के 'मत्योरा की विदाई' और 'अंतिम घड़ी' से की है। आँचलिक उपन्यास में अंचल ही नायक लगे, उसमें अनुभवशीलता एवं यथार्थ का वर्णन होता है, किन्तु प्रत्येक यथार्थ का उपन्यास, आँचलिक नहीं होता, इसलिए अनुभवशीलता एवं यथार्थ के साथ-साथ उस अंचल के प्रति ऐतिहासिकता एवं वैज्ञानिक धारणा भी होनी चाहिए।

आँचलिक उपन्यास की कुछ मुख्य विशेषताएँ इस प्रकार रेखांकित की जा सकती है- इसमें व्यक्ति आदि को निष्कासित कर दिया जाता है, उसके स्थान पर अंचल को महत्त्व दिया जाता है, अंचल ही नायक के रूप में उभर कर समाने आता है यथा अत्यधिक एवं विविध पात्रों की योजना खेत खलियान, ग्रामदेवता इत्यादि क्षेत्र विशेष की भौगोलिक स्थिति एवं प्राकृतिक स्वरूप का चित्रण होता है। अंचल विशेष की भाषा संस्कृति लोकगीत लोक नृत्य, सांस्कृतिक परम्पराओं, पर्वो, खान-पान, रहन-सहन का चित्रण होता है।- क्षेत्र विशेष के सामाजिक संगठन, जातीय एवं जनजातीय स्वरूप का चित्रण होता है। अंचल विशेष की समस्याओं जैसे स्वास्थ्य समस्याएं बेरोजगारी, पिछड़ेपन तथा उनके कारणों, किसानों की स्थिति, आदि का चित्रण होता है। क्षेत्र विशेष के जनसमुदाय एवं स्थान से संबंधित प्रचलित मिथकों एवं लोक विश्वासों का चित्रण होता है। उपर्युक्त विशेषताएं ही किसी सामाजिक या ग्रामीण उपन्यास को किसी आँचलिक उपन्यास से अलग करती है।

हिन्दी के आंचलिक उपन्यासों की दिशा में सर्वप्रथम प्रयास श्री राधेश्याम कौशिक की पुस्तक 'हिन्दी के आंचलिक उपन्यास' है। सन् 1964 में श्री प्रकाश वाजपेयी कृत 'हिन्दी के आंचलिक उपन्यास' कृति प्रकाशित हुई, इसमें चैदह उपन्यासों को आंचलिक उपन्यास मानते हुए उनका सर्वेक्षण अपने 'हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद' नामक ग्रन्थ में किया है।

शिवप्रसाद मिश्र 'रूद्र' का काशी के जनजीवन पर आधारित 'बहती गंगा' (1952) उपन्यास भी आंचलिक उपन्यास माना जाता है। इसमें काशी के सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक जीवन का दो सौ वर्षों का इतिहास अंकित है।

फनीश्वरनाथ 'रेणु' का 'मैला आँचल' उपन्यास साहित्य में एक नई विधा को जन्म दिया। मैला आँचल को हिन्दी का प्रथम श्रेष्ठ आंचलिक उपन्यास माना जाता है। इस उपन्यास में बिहार राज्य के पूर्णिया जिले के मेरीगंज गाँव की कहानी है। इस गांव में रेणु इतना रम गए कि इस उपन्यास की भूमिका में वह लिखते हैं-"इसमें फूल भी है, शूल भी है, धूल भी है, गुलाल भी है, कीचड़ भी है, चंदन भी है, सुन्दरता भी है कुरूपता भी है। मैं किसी से भी दामन बचाकर निकल नहीं पाया।"

हिन्दी के आँचलिक उपन्यासों में रेणु का स्थान एवं महत्व अनन्य एवं विलक्षण है। आँचलिक उपन्यासों का प्रवर्तन किसने किया इस संबंध में विद्वानों में मतभेद रहा है। कुछ विद्वान 'मन्नन द्विवेदी गजपुरी' द्वारा लिखित रामलाल (1914) को पहला आँचलिक उपन्यास मानते है। मैला आँचल से पूर्व 'शिव पूजन सहाय' का "देहाती-दुनिया" (1926) में आ गया था। जिसके भोजपुर अंचल के सांस्कृतिक एवं भाषिक विशेषताओं को प्रस्तुत किया गया। इसी प्रकार कुछ विद्वान मैला आँचल से पूर्व नागार्जुन द्वारा लिखित 'बलचनमा' को इसका श्रेय देना चाहते हैं। परन्तु अधिकांश विद्वान एवं आलोचक एवं रेणु को इस दृष्टि से महत्त्व देते हैं क्योंकि उन्होंने पहली बार आँचलिक उपन्यास का मॉडल प्रस्तुत किया और उसको पारिभाषिक तौर पर व्याख्यायित किया। इसलिए वर्तमान में अधिकांश समीक्षकों द्वारा यह स्वीकार किया गया है कि आँचलिक उपन्यास की एक लम्बी परम्परा चल पड़ी जिसका कि रेणु ने प्रवर्तन किया।

परवर्ती आँचलिक उपन्यासकारों में देवेन्द्र सत्यार्थी का 'ब्रह्मपुत्र' (1956), 'उदयशंकर भट्ट' का 'सागर-लहरें और मनुष्य' प्रकाशित हुआ। ब्रह्मपुत्र में 'सत्यार्थी' ने असम में ब्रह्मपुत्र के बीच स्थित विशाल द्वीप माझुली और इसके किनारे बसे दिसांगमुख के निवासियों की अभाव, यातना और संघर्ष पूर्ण कथा प्रस्तुत की है। 'सागर लहरे और मनुष्य' में मुम्बई के पश्चिमी सागर तट 'बरसोवा' के मछुआरों की सामूहिक जिन्दगी समुद्र के साथ उनके संघर्ष एवं अभावों से लड़ती त्रासदी का चित्रण है। 1957 में रेणु का "परती परिकथा" आया और इसी बीच 'रांगेय राघव' का "कब तक पुकारूं" प्रकाश में आया। इसमें राघव जी ने 'कर्नट' जाति की

जिन्दगी का तो चित्रण किया है परन्तु इसमें अंचल विशेष अपना सम्पूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं करता।

इस परम्परा में 'शैलेश माटियानी' रेणु के सच्चे उत्तराधिकारी साबित हुए। जिन्होंने अपने तीन उपन्यास "बोरीवली बोरीबन्दर तक" "कबूतर खाना", 'किस्सा नर्मदा बेन गंगूबाई' आदि में मुम्बई निम्न वर्गीय जीवन का चित्रण किया है। जिसमें सीमेन्ट के पीपों, गंदी बदबूदार गलियों की जिन्दगी का वर्णन है। शैलेश माटियानी आँचलिक उपन्यासों में आँचलिक शिल्प पर ज्यादा जोर देते हैं। इसी क्रम में 'जगदम्बिका प्रसाद दीक्षित' का "मुर्दाघर" (1974), 'कृष्णा सोबती' का 'जिंदगीनामा'(1979), माटियानी के अन्य उपन्यास- 'चिट्ठीरसैन', एक मूठ सरसों आदि महत्वपूर्ण है, जैसा कि बताया जा चुका है कि शैलेश माटियानी जी ने आँचलिक शिल्प को अधिक महत्व दिया है वे रेणु की ही तरह लोक कथाओं का वर्णन करते है उन्होंने अक्षर आकर्षण, अर्थ गाम्भीर्य एवं ध्वनि विशेष को ज्यादा महत्त्व दिया है। आगे चलकर इनके उपन्यास "सर्वगन्धा" (1979), "डेरेवाले" (1980), में पहाड़ी दलित समाज के चित्रण है।

सातवें दशक में डॉ. रामदरश मिश्र के उपन्यास 'पानी के प्राचीर', "जल टूटता हुआ" में उत्तर प्रदेश के गोरखपुर जनपद में 'राप्ती घाघरा अंचल' की कथा है यही बात 'शिव प्रसाद सिंह' के 'अलग-अलग वैतर्णी' में देखने को मिलती है। 'मैत्रेयी पुष्पा' के "इदन्नमम" और 'चाक' में क्रमशः विंध्य और ब्रज के ग्रामीण जीवन का चित्रांकन है। बीसवीं शताब्दी के समापन पर भगवानदास पोरवाल का 'काला-पहाड़' (1994) आँचलिक उपन्यास की कड़ी के रूप में सामने आता है किन्तु इसमें रेणु एवं माटियानी की तरह आँचरिकता एवं शिल्प के प्रति झुकाव सिद्वस्थ की कमी है।

अन्य आंचलिक कृतियों में शैलेश मटियानी का 'होलदार' (1960) कुमायूं के अल्मोड़ा के अंचल की कहानी है। 'चिट्ठी रसैन' (1961) में 'उडलगो' गांव को कथा की पृष्ठभूमि में रखा गया है। 'चैथी मुट्ठी' (1962) में कुमायूं के पर्वतीय अंचल के लोकजीवन को उभारा गया है। यह एक लघु आंचलिक उपन्यास है। रामदरश मिश्र के 'पानी और प्राचीर' (1961) में गोरखपुर के स्थानीय भू-भाग को दर्शाया गया है। 'सूरज किरन की छांह' (1959) राजेन्द्र अवस्थी का आत्मकथात्मक शैली में लिखा हुआ आदिवासी गोंडों के जीवन को चित्रित करता है। 'जंगल के फूल' (1960) में मध्यप्रदेश के आदिमजाति की कहानी तथा वन्य जीवन की सुन्दरता को दर्शाया है। बलभद्र ठाकुर कृत 'मुक्तावती' (1955), 'आदिमनाथ' (1959), 'नेपाल की वो बेटी' आदि आंचलिक उपन्यास है। अमृतलाल नागर कृत 'सेठ बांकेमल', 'बूंद और समुद्र' आदि उपन्यास में आंचलिक भाषा का प्रयोग किया गया है।

भैरवप्रसाद गुप्त का 'मशाल' (1951) को भी आंचलिक उपन्यास माना गया है। हालाकि उपन्यास का मूल स्वर साम्यवादी चेतना है। 'गंगा मैया' में किसानों का आंचलिक जीवन प्रगतिवादी चेतना के जरिये मुखरित हुआ है। 'सती मैया का चैरा' (1959) उत्तरप्रदेश के गाँव पिटारी के जनजीवन पर आधारित है। डॉ. लक्ष्मीनारायण लाल का 'बया का घोंसला और सांप' (1953) में ग्रामीण लोकजीवन और ग्रामीण समस्याओं का मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया गया है। आनन्द प्रकाश जैन का 'आठवीं भँवर' (1969) स्त्री-पुरुष के सम्बन्धों पर आधारित आंचलिक उपन्यास है।

शिवप्रसाद सिंह का 'अलग-अलग वैतरणी' (1967) पूर्वी उत्तरप्रदेश के वाराणसी क्षेत्र के 'करैता' ग्राम की कथा प्रस्तुत करता है।

आंचलिक उपन्यास में स्त्री-चेतना

प्राचीनकाल से स्त्री अपनी कोमलतम भावनाओं तथा समर्पित जीवन से पुरुषों के लिए प्रेरणादायी स्रोत बनी हुई थी। मातृत्व की पीड़ा को सुखद मानकर स्त्री ने सृष्टि का सृजन किया और विश्वमंगल की कामना रखी तथा वह त्याग, सेवा और बलिदान का प्रतीक बन गई परन्तु आंचलिक उपन्यास परम्परा में यथार्थवाद को उद्घाटित किया गया है। इसी परम्परा में कुम्भीपाक उपन्यास में कुम्भीपाक की चम्पा पति की मृत्यु के बाद अपने जीजा से अवैध सम्बन्ध स्थापित कर लेती है। लेकिन उसका जीजा समाज के भय के कारण चम्पा को पत्नी के रूप में स्वीकार नहीं करता और अंत में उसे कुम्भीपाक में जाकर आश्रय लेना पड़ता है।

'उग्रतारा' उपन्यास के माध्यम से नागार्जुन ने नवयुवकों में वैचारिक दृष्टिकोण बदलने का प्रयास किया है। साथ ही नारी पात्रों के द्वारा समाज उत्थान की प्रगतिशील चेतना को दर्शाया है। इस उपन्यास का पात्र कामेश्वर अपनी प्रेमिका उगनी (उग्रतारा) को बिना किसी दबाव तथा सामाजिक बंधन के अभाव में स्वीकार कर लेता है तथा जिस मनोभावना से भाभी कामेश्वर तथा उग्रतारा की गृहस्थी बसाती है तथा समाज में प्रगतिशील विचारों की पहल करती है वह सराहनीय है।

'इमरतिया' उपन्यास में प्रगतिशील चेतना तथा जागरूकता से सम्पन्न नई विचारधारा वाले समाज को दर्शाया है। स्त्री

हमेशा से नागार्जुन के रचना के केंद्र में रही है। इस उपन्यास में भी यह साफतौर पर दीखता है। उन्होंने अपनी रचनाओं के द्वारा हमेशा स्त्री को समाज का सक्रिय अंग बनाने का प्रयास किया है।

'दुखमोचन' उपन्यास का नायक दुखमोचन अपने नाम के अनुरूप दूसरे के दुखदर्द को दूर करने की कोशिश करता है। युवा पत्नी की समय से पूर्व मृत्यु ने उसे पर दुखों के प्रति सम्वेदनशील तथा सजग बना दिया है। उपन्यास के पात्र माया, मामी, कपिल, अपर्णा आदि दुखमोचन के इर्द-गिर्द घूमते हुए बड़े सजीव और जीवंत प्रतीत होते हैं। माया और कपिल के प्रेम का पता जब उसकी माँ को चलता है तो वह बेटी की भलाई के लिए परिस्थितियों के अनुसार अपने विचारधारा में परिवर्तन कर लेती है। 'नदी फिर बह चली' हिमांशु जोशी कृत उपन्यास में 'परबतिया' का चरित्र जुझारू एवं संघर्षशील है। वस्तुतः परबतिया के रूप में लेखक ने एक ऐसी सजग स्त्री को गढ़ा है जो नारी जाति को नवजागरण का संदेश देते हुए सामाजिक न्याय और मूल्यों की रक्षा के लिए संघर्ष करती है।

राजेन्द्र अवस्थी कृत 'जंगल के फूल' आदिवासी युवती 'महुआ' की कथा है। महुआ सलूक से प्रेम करती है और उससे विवाह करना चाहती है सलूक इसके लिए तैयार नहीं होता है और गाँव छोड़कर चला जाता है। महुआ अपना सम्पूर्ण जीवन आदिवासी महिलाओं के विकास में लगाती है। उसमें चिन्तन और संकल्प शक्ति का अद्भुत सामंजस्य है, वह कहती है-"हम औरतों को तुम नाजुक न समझो। हम पिरेम भी कर सकती हैं तो दुश्मन के दांत भी उखाड़ सकती है।" उसने अपना सम्पूर्ण जीवन अंचल की महिलाओं के लिए समर्पित कर दिया है। बस्तर की आदिवासी स्त्रियों को शस्त्र चलाना तथा युद्ध के अन्य तौर-तरीकों की जानकारी देना अब उसके जीवन का ध्येय हो गया था। उदयशंकर भट्ट कृत 'लोक-परलोक' सामाजिक यथार्थ की भूमि पर लिखा गया एक सफल आंचलिक उपन्यास है। उपन्यास की नायिका चमेली विशुद्ध भारतीय नारी का प्रतीक है। चमेली के चरित्र के माध्यम से लेखक ने यत्र-तत्र उपन्यास में नारी चेतना को दर्शाया है। 'दीर्घतपा' रेणु कृत उपन्यास स्वतंत्र भारत के नारी जीवन की अत्यंत करुण कहानी है। उपन्यास की नायिका 'बेलागुप्त' की एक अत्यंत सात्विक, साहसी, पराक्रमी तथा क्रांतिकारी मनोवृत्ति की है जो देश के लिए अपना सर्वस्व बलिदान करने को तैयार रहती है। लेकिन समाज के तथाकथित ठेकेदारों के कुकर्मों की सजा बेलागुप्त को मिलती है। रेणु कृत 'जुलूस' उपन्यास की नायिका 'पवित्रा चटर्जी' है। उपन्यास की कथावस्तु गोडियर गाँव के राजपूत, ग्वाले तथा गोडी टोलों के लोगों की जीवन को दर्शाता है। वहां के जनजीवन में प्रचलित अंधविश्वास, रीतिरिवाज एवं अन्य धार्मिक जीवन में प्रचलित अंधविश्वास, रीतिरिवाज एवं अन्य धार्मिक परम्पराओं का वर्णन मिलता है। पवित्रा का जीवन दुःख एवं सामाजिक असमानताओं का शिकार है। वह कहती है-"मैं जन्म से लेकर आज तक दुःख भोग रही हूँ। मैं जहाँ जाती हूँ अपने साथ प्रलय ले जाती हूँ मौत, मुझसे प्यार करने वाला ज्यादा दिन तक जीता नहीं।" नारी जाति के त्याग और समर्पण की भावना उपन्यास में भावुकता का वातावरण उत्पन्न करती है।

'परती परिकथा' की नायिका 'इरावती' लाहौर से दिल्ली और बिहार तक शरणार्थी कैंपों की खाक छानती है। दस महीने में तीन राजनीतिक पार्टियों से सम्बन्ध जोड़ती और तोड़ती है। उसके चरित्र के सम्बन्ध में तरह-तरह की बातें उड़ती है। इरावती का दर्द और बेबसी इन शब्दों में झलकता है-"असल में प्यार करने की ताकत मुझमें नहीं है। मेरे प्यार को लकवा मार गया है।"

"मैला आँचल' की नायिका कमली तहसीलदार विश्वनाथ प्रसाद की बेटी है। भोली-भाली लड़की कमली डॉ. प्रशांत के प्रेम में पड़ती है। जब डॉ. प्रशांत जेल में रहते हैं तो वह बिना विवाह के उसके बच्चे की माँ बनती है। इस तरह से वह सामाजिक मान्यताओं को दरकिनार करती है। कमली का चरित्र एक प्रेमिका तथा माँ के रूप में सशक्त रूप से उपन्यास में उभरता है। मैत्रेयी पुष्पा कृत 'चाक' भी आंचलिक उपन्यास है। उपन्यास की नायिका सारंग की विधवा बहन रेशम को मौत के घाट उतार दिया जाता है क्योंकि वह गर्भवती थी। सारंग इन सब अत्याचारों के खिलाफ आवाज उठाती है तथा सशक्त रूप में उभरकर उपन्यास में सामने आती है। वस्तुतः यह उपन्यास सही मायने में ग्रामीण स्त्री के सशक्तीकरण को दर्शाता है। प्रभा खेतान की 'छिन्नमस्ता' की नायिका प्रिया के चरित्र को परम्परा, पूंजी और पहचान की आत्मसंघर्ष के रूप में दर्शाया है। प्रिया का मानना है कि व्यवस्था को तोड़नेवाली औरत को जहाँ समाज सौ कोड़े लगाता है, वहीं पुरुष को क्रांतिकारी कहकर मंच पर बिठाता है।

आंचलिक उपन्यास की प्रमुख उपलब्धि है देश, काल या परिवेश को सर्वथा नवीन रूप में ग्रहण करना तथा इनमें प्रदेश, विशेष या जाति विशेष के जीवन, प्रश्न, रीति-रिवाजों, प्रथा, परम्परा, आस्था, संस्कृति, लोकजीवन, बोली, गीत, लोककथा आदि का चित्रण विशेष कौशल और विस्तार से किया जाता है। समसामयिक चेतना तथा आधुनिक भाव बोध इन उपन्यासों में गहराई के साथ उभरकर सामने आया है। सामाजिक विषमता और राजनीतिक संघर्ष के साथ

सामाजिक चेतना के विकास के साथ-साथ स्त्री चेतना का विकास भी इन उपन्यासों में अभिव्यक्त हुआ है। इनके साथ-साथ आंचलिक उपन्यासकारों ने पारिवारिक विघटन, दाम्पत्य जीवन में बिखराव, तनाव, बन्धुत्व भाव में त्याग और सहयोग के स्थान पर स्वार्थपरता आदि प्रवृत्तियों का अपने कृतियों में स्थान दिया है। ग्रामीण जनजातीय समाज के परम्परागत स्वरूप को साहित्य के आँगन में प्रस्तुत कर इनकी समस्याओं से अवगत कराना ही इन उपन्यासकारों का ध्येय रहा है। स्त्री चेतना के मुखर स्वर भी इन उपन्यासों में स्पष्ट तौर पर देखने को मिलता है। 'मैला आंचल' की कमली, लक्ष्मी दीर्घतपा' की बेलागुप्त 'जुलूस' की पवित्रा, 'परती परिकथा' की इरावती, ताजमनी, 'ब्रह्मपुत्र' की आरती, 'जंगल के फूल' की महुआ 'रतिनाथ की चाची' की गौरी, 'नई पौध' की बिससेरी, 'कुम्भीपाक' की चम्पा तथा नीरू 'पारो' की पार्वती 'उग्रतारा', की उगनी, 'दुखमोचन' की माया, 'बया का घोसला और सांप' की सुभागी 'वरुण की बेटी' की मधुरी, 'चाक' की सारंग 'छिन्नमस्ता' की प्रिया ये स्त्री पात्र ग्रामीण, सामाजिक व्यवस्था के पुनर्निर्माण में किसी आलोक स्तम्भ से कम नहीं है।

परन्तु, समकालीन साहित्य लेखन में 'आंचलिकता' को केन्द्र बनाकर साहित्य सृजन की प्रवृत्ति कम होती जा रही है। इसका कारण संभवतः वैश्वीकरण का प्रभाव एवं 'वैश्विक ग्राम' की संकल्पना के साथ 'प्रौद्योगिकी मानव' का विकास है। परन्तु वर्तमान में आंचलिक उपन्यास की इस बहुआयामी अवधारणा ने हिन्दी साहित्य की परम्परा को और अधिक समृद्ध बनाया है, जिसके कारण वैश्विक आंचलिक उपन्यासों की श्रेणी में हिन्दी के आंचलिक उपन्यासों को भी महत्त्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है।

संदर्भ ग्रंथ

1. हिन्दी उपन्यास का इतिहास, गोपालराय, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली 2009
2. हिन्दी गद्य साहित्य, डॉ. रामचंद्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, 2012
3. मैला आँचल, फणीश्वरनाथ रेणु, प्रथम संस्करण 1954, भूमिका
4. शिवप्रसाद सिंह 'आंचलिकता और आधुनिक परिवेश' कल्पना, पृ. 32
5. हिन्दी उपन्यास का अंतर्यात्रा- डॉ. रामदरश मिश्र, पृ. 32
6. पिछले दशक की देन, आंचलिक उपन्यास साहित्य का संदेश- श्री विश्वंभरनाथ उपाध्याय, पृ. 6
7. स्वातन्त्रयोत्तर हिन्दी उपन्यास - कान्ति वर्मा, पृ. 184
8. अलग-अलग वैतरणी- शिवप्रसाद सिंह, पृ. 404
9. रतिनाथ की चाची- नागार्जुन, पृ. 47
10. नई पौध- नागार्जुन, पृ. 80
11. कुम्भीपाक- नागार्जुन, पृ. 82
12. पारो- नागार्जुन, पृ. 49
13. जंगल के फूल- राजेन्द्र अवस्थी, पृ. 189
14. वरुण के बेटे - नागार्जुन, पृ. 79
15. जुलूस- रेणु, पृ. 139
16. परती परिकथा- रेणु, पृ. 121
17. अपर्णा दीप्ति - हिन्दी के आंचलिक उपन्यास में स्त्री-चेतना - शोध लेख।

Corresponding Author

Dr. Abhishek Yadav*